International Journal of Applied Research 2015; 1(4): 333-334

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 3.4
IJAR 2015; 1(4): 333-334
www.allresearchjournal.com
Received: 22-02-2015
Accepted: 25-03-2015

डॉ० बी.के. गर्ग
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग हिन्दू कॉलेज, सोनीपत (हरियाणा)

Correspondence:
डॉ० बी.के. गर्ग
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग हिन्दू कॉलेज, सोनीपत (हरियाणा)

रामकथा में मानवीय मूल्य एवं जातीय समभाव (तुलसीदास के संदर्भ में)

डॉ० बी.के. गर्ग

राम हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। हम जम्भाई भी लेते हैं तो राम कहते हैं। सामाजिक अभिवादन में भी 'राम–राम' शब्द का प्रयोग करते हैं। आचार्य नगेन्द्र द्वारा सम्पादित 'भारतीय साहित्य का समेकित इतिहास' में एक निबंध रामनरेश त्रिपाठी का है, जिस का विषय है–'भारतीय रामायण काव्य'। इस निबंध के अनुसार भारत के प्रत्येक क्षेत्र एवं राज्यों की विभिन्न रामायणों से लोक जीवन का गहरा संबंध है। गुजराती रामायण, पंजाबी रामायण, नेपाली, असमिया, बंगला, कम्ब, उड़िया रामायण आदि सभी में थोड़े–बहुत अंतर के साथ एक ही राम से जुड़ी चेतना है। इतना ही नहीं, विदेशों में भी रामकथा का बोलबाला है। इस संदर्भ में कंबोडिया, वर्मा, श्रीलंका, मलेशिया, फिलीपीन, चीन, जापान, मॉरीशस आदि उल्लेख्य हैं। मॉरीशस में तो हर हिंदू के घर के बाहर हनुमान चबूतरा है, जिस पर लाल रंग की पताका फहराती है। इंडोनेशिया में मुस्लिम और बौद्धों के विवाह में रामायण का दृश्य प्रस्तुत किया जाता है।

राम हमारे भारतीय समाज में अक्सर महामानव, पुरूषोत्तम अथवा ब्रह्म इत्यादि के रूप में जाने जाते हैं। अतः राम जैसे उदारचेता व्यक्तित्व से जुड़ी कथाओं में मानवीय मूल्यों, साम्प्रदायिक समभाव इत्यादि तत्त्वों का होना तो नैसर्गिक ही माना जाना चाहिए। हिंदी साहित्य में रामकथा से जुड़े सबसे बड़े व्यक्तित्व हैं–तुलसीदास। तुलसीदास इतना बड़ा व्यक्तित्व कि हिंदी में जो पहले पाँच शोध–प्रबंध लिखे गए, उनमें से तीन का संबंध तुलसीदास और उनके 'रामचरित मानस' से रहा है। तुलसी का युग वह युग था, जब साम्प्रदायिक सद्भावना का स्वरूप आज से कुछ भिन्न था। हिंदू धर्म के विभिन्न सम्प्रदायों, मतों में अंदर ही अंदर इतना वैमनस्य था, जिसे सौमनस्य में परिवर्तित करना बहुत बड़ी चुनौती थी। शैव और वैष्णव, ज्ञान और भक्ति, सगुण और निर्गुण, ब्राह्मण और शूद्र– आदि आधार पर समाज बंटा हुआ था। बहुत से विद्वान इस बंटे हुए समाज को एक करने का श्रेय तुलसीदास को देते हैं। जार्ज ग्रियर्सन ने भी कहा कि बुद्ध के बाद तुलसी सबसे बड़े लोकनायक है। परंतु मैं उपर्युक्त विचारों से इतफाक नहीं रखता।

तुलसीदास के जीवन और साहित्य का विश्लेषण करते हुए हम पाते हैं कि जन्म से ही समाज के दुर्वह प्रहारों को सहते–सहते तुलसी का अहं टूटने के स्थान पर प्रचण्ड एवं उग्र हो गया था। इसलिए तुलसी का व्यक्तित्व झुकने के लिए तैयार न था। अपने विरोधियों एवं विधर्मियों के प्रति तुलसी या तो आक्रामक बनकर आये हैं या फिर बड़े चातुर्य के साथ उनको अपने 'दल' में मिलाने के लिए 'चिकनी–चुपड़ी' सुनाने आये हैं। उन की इस कूटनीति–भरी विनम्रता से विद्वानों को ऐसा भ्रम हुआ है, जैसे तुलसी अपने आग्रह को छोड़कर विपक्ष की बात मानने के लिए तैयार हो गये हों। सिद्धान्त की दृष्टि से तुलसी कट्टर वैष्णव, दर्शन की दृष्टि से विशिष्टाद्वैतवादी, उपासना की दृष्टि से सगुणोपासक भक्त थे। उन्होंने किसी भी स्थान पर इन सैद्धान्तिक बिन्दुओं से तिल भर भी हटना स्वीकार नहीं किया है। अपने मत की पुष्टि हेतु मैं कुछ तथ्य रखना चाहता हूँ।

तुलसी ने कुछ स्थलों पर यह वक्तव्य दिया है कि राम और शिव एक हैं, उनमें कोई अन्तर नहीं। तुलसी का यह वक्तव्य कूटनीति भरा है। शैवों को सान्त्वना देने के लिए उन्होंने राम की शिव से और शिव की राम से उपासना कराई है। बड़े महत्त्व की बात यह है कि शिव के मुख से कवि यह कहलाता है कि सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति एवं लय के कारण राम हैं, वे सर्वव्यापी हैं, सर्वज्ञ हैं, किन्तु यह गौरव कवि ने शिव को कहीं नहीं दिया है। दूसरी बात यह है कि कवि शिव से वरदान में 'रामकृपा' मांगता है, किन्तु राम से 'शिवकृपा' की याचना नहीं करता। जब तुलसी का 'अचलनेम' रामभक्ति ही है, तो वह समन्वयकारी कहां हुए? अतः समन्वय का यह प्रपंच शैवों के विरोध को प्रभावहीन करने के लिए तथा उनको अपने धर्म–ध्वज के नीचे लाने के लिए रचा गया था।

'ज्ञानहिं भगतिहिं नहि कछु भेदा'

जब तुलसी ने ऐसा कहा तो हमें लगा कि उदार तुलसी भक्ति और ज्ञान को समान महत्त्व दे रहे हैं। परंतु तुलसी की उदारता को लेकर हमारा विश्वास तब डोलने लगता है, जब वे कहते हैं–

''ज्ञान के पंथ कृपान की धारा...''

अर्थात भक्ति–मार्ग सरल है, निर्विघ्न है अतएव ग्राह्य है, इसके विपरीत ज्ञानमार्ग कृपाण की धार है, विघ्नों से भरपूर है और इसलिए वह अग्राह्य है। स्पष्ट है कि तुलसी के दोनों वक्तव्य परस्पर–विरोधी हैं। तुलसी ज्ञानमार्ग को भक्तिमार्ग के समकक्ष मानने के लिए तैयार नहीं है।

तुलसी ने कागभुशुंडि की उत्तरकाण्ड में जो दुर्गति कराई है, उसका कारण यह है कि यह ज्ञानवादी था। उसे भक्त बनाकर तुलसी ने उससे प्रायश्चित कराया है। भक्ति के बिना ज्ञानी भी तुलसी की दृष्टि में पशु है।

'तुलसी अलखहिं का लखै, राम–नामु जपु नीच' कहकर अलख जगाने वाले योगियों के प्रति अपना विद्वेष प्रगट करने वाला तुलसी भक्ति और योग का समन्वयकर्ता कैसे हो सकता है।

निर्गुणमतवाद भी उन्हें कभी स्वीकार्य नहीं रहा। उन्होंने राम को निराकार की गरिमा प्रदान अवश्य की है, किन्तु इसका उद्देश्य राम के महत्व को विस्तार देना भर था, निराकार के प्रति भक्ति भाव प्रकट करना उन्हें अभीष्ट न था। इसीलिए वे राम को निराकर तो मान लेते हैं, किन्तु उनके आराध्य सगुण राम ही रहते हैं। राम को अधिकाधिक महान बनाने के लिए उन पर निर्गुण का आरोप किया गया है। तुलसी झुकते सगुण राम के सामने ही है, निर्गुण के सामने नहीं।

तत्कालीन युग की साम्प्रदायिकता का एक रूप वर्णव्यवस्था से भी संबद्ध था। ब्राह्मणों और शूद्रों का विषय बड़ा संवेदनशील था। प्रायः केवट, शबरी, निषाद जैसे प्रसंगों के आधार पर तुलसी को जातिगत विषमता के बंधनों को काटने वाले व्यक्ति के रूप में श्रेय दिया जाता रहा है। लेकिन 'मानस' के 'उत्तरकाण्ड' में तुलसीदास वर्ण व्यवस्था के सबसे बड़े प्रहरी के रूप में दिखायी देते हैं, जब वे कहते हैं–

पूजिअ विप्र सील गुन हीना
सूद्र न गुन गन ग्यान प्रवीना।

'गीताप्रेस' गोरखपुर से प्रकाशित तुलसी की कृति है 'कवितावली'। इसके 'उत्तरकांड' में सवैया संख्या पांच में तो तुलसी सारी सामाजिक एवं शिष्टाचार की सीमाएँ लांघ जाते हैं। उन्हें अपने राम की महिमा का गुणगान करना है, इस महानता की झोंक में वे कहते हैं कि राम की शरण में आकर वह विभीषण साधुता की सीमा बन गया, जो आज तक अपने बड़े भाई की पत्नी मंदोदरी का उपभोग करता रहा है।

अंत में बस इतना ही कहना चाहूँगा कि सब कुछ जानने के बाद भी कोई तुलसी के काव्य में जीवन–मूल्य, जातिगत समता, साम्प्रदायिक सद्भावना स्थापित करना चाहे तो करले, लेकिन मुझे ऐसा मानने में संकोच है। कटु सत्य यह है कि तुलसी के काव्य में घोर हठवादिता, मधुर भाषा से सम्पृक्त कूटनीति, चातुरी अधिक, समान धरातलीय स्पर्श बिन्दु दुर्लभ हैं।

संदर्भः–

1. रामचरितमानस– तुलसीदास
2. कवितावली– तुलसीदास
3. भारतीय साहित्य का समेकित इतिहास – आचार्य नगेन्द्र
4. 'दोहावली' – तुलसीदास